ज्योतिर्लिंग : प्रकाश-स्तम्भ

अमी बन्सल द्वारा लिखित व्याख्या

भगवान शिव के माहात्म्य से—उन महादेव से जिनका पूजन-वन्दन हम महाशिवरात्रि पर करते हैं—मेरा परिचय हुआ, श्रीगुरुगीता के माध्यम से। मैं बचपन से ही अपनी श्रीगुरु, गुरुमाई चिद्विलासानन्द की सिखावनियों का अध्ययन करती रही हूँ और नियमित रूप से गुरुदेव सिद्धपीठ की यात्रा करती रही हूँ, अतः मुझमें यह समझ विकसित होती गई कि सिद्धयोग पथ पर श्रीगुरुगीता एक अतीव पावन स्तोत्र है व इसका अनन्यसाधारण महत्त्व है। भगवान शिव द्वारा भगवती पार्वती को दिए गए इस स्वाध्याय-स्तोत्र रूपी उपदेश से मैं हमेशा ही मन्त्रमुग्ध होती क्योंकि इसमें भगवान शिव द्वारा श्रीगुरु के स्वरूप के विषय पर की गई व्याख्या मेरा मन मोह लेती। इसमें दी गई सिखावनियों के माध्यम से मुझे अपनी श्रीगुरु को जानने, उनके महत्त्व को समझने और उनकी पूजा करने के लिए मार्गदर्शन मिला।

जब मैं लगभग ग्यारह साल की थी तब एक बार मैं गुरुदेव सिद्धपीठ गई थी। एक दिन दोपहर को मैंने अपनी स्वाध्याय की पुस्तक खोली और मैं श्रीगुरुगीता के श्लोकों के अर्थ को विस्तार से पढ़ने लगी व उनका अध्ययन करने लगी। इस शास्त्र में भगवान शिव द्वारा प्रतिपादित एक सौ बयासी श्लोकों में से प्रत्येक श्लोक के विषय में अध्ययन करने के लिए मुझे कई दिन लगे। इस संस्कृत स्तोत्र का अध्ययन करते हुए मैं इसके प्रत्येक शब्द पर केन्द्रण करती और उसके अर्थ को समझने का प्रयास करती। पूरे स्तोत्र के अपने अध्ययन के समापन पर एक बात मेरे लिए बहुत स्पष्ट हुई और वह थी, भगवान शिव का उपदेश :

> न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम्।
>
> गुरु से अधिक कुछ नहीं है।
> निस्सन्देह, गुरु से अधिक कुछ नहीं है।[१]
>
> इदमेव शिवं त्विदमेव शिवम्।
>
> गुरुतत्त्व ***ही*** शिव है।
> निस्सन्देह, गुरुतत्त्व ही शिव है।[२]

मुझे याद है कि इस बात को स्पष्ट रूप में जानने पर मुझे बहुत राहत और आश्वासन महसूस हुआ था कि वस्तुतः श्रीगुरु परम शिव ही हैं, और यह कि भगवान शिव और मेरी श्रीगुरु भिन्न नहीं हैं। उसके बाद, जब भी मैं गुरुशक्ति से अनुप्राणित, श्रीगुरु द्वारा प्रदत्त चैतन्य मन्त्र 'ॐ नमः शिवाय' का जप करती, मेरे अन्दर यह बोध बना रहता कि मैं अपनी श्रीगुरु की उपस्थिति का सम्मान कर रही हूँ जो परशिव हैं, मेरी अन्तरस्थ आत्मा हैं।

भारत की शास्त्रीय परम्परा में, भगवान शिव अनेकानेक देवों में से मात्र एक देव नहीं हैं। वे देवाधिदेव, महादेव हैं। साथ ही, भगवान शिव का आदिगुरु के रूप में सर्वोच्च स्थान भी है। वे साक्षात् परम चिति हैं और दैवी ज्ञान के समस्त अंगों के शिक्षक हैं, जैसे योग, ध्यान, संगीत व नृत्य। वे अनेक देवों तथा ऋषि-मुनियों के गुरु हैं और उन्होंने उन असंख्य शास्त्रों को प्रकट किया है जिन्होंने सहस्राब्दियों से अनगिनत साधकों को आत्मसाक्षात्कार के पथ पर मार्गदर्शन प्रदान किया है।

श्रीगुरुगीता में भगवान शिव स्वयं 'गुरु' शब्द का अर्थ समझाते हैं :

> गुकारस्त्वन्धकारश्च रुकारस्तेज उच्यते।
> अज्ञान-ग्रासकं ब्रह्म गुरुरेव न संशयः॥
>
> 'गु' शब्द का अर्थ है, अन्धकार और 'रु' शब्द का अर्थ है, तेज-प्रकाश। श्रीगुरु ही अज्ञान का भक्षण करने वाले, उसका नाश करने वाले ब्रह्म हैं, इसमें सन्देह नहीं है।[३]

अतः, सच्चे 'गु-रु' वे हैं जो हमें भ्रान्ति के आवरण तथा अज्ञान के तिमिर से दूर ले जाते हैं और ज्ञान के प्रकाश में प्रवेश कराकर हमें अपनी आत्मा का दिव्यबोध कराते हैं।

***

भगवान शिव का एक परम पूजनीय व गहन प्रतीक है, शिवलिंग। शिवलिंग का आविर्भाव किस प्रकार हुआ इसकी कथा भगवान ब्रह्मा जी द्वारा निरूपित लिंगपुराण में वर्णित है।

कहानी का आरम्भ होता है, देवलोक में भगवान ब्रह्मा और भगवान विष्णु के बीच हो रहे संवाद के साथ। वे इस बात पर चर्चा कर रहे होते हैं कि उनमें से कौन श्रेष्ठ है। जब उनके बीच वाद-विवाद चल रहा होता है तभी एक भव्य, वैभवशाली प्रकाश-स्तम्भ उनके समक्ष प्रकट होता है। उसकी दीप्ति अलौकिक रूप से तेजोमय होती है, तथापि उसका सान्निध्य पूर्ण शान्ति प्रदान करने वाला व सुखद होता है।

लिंगपुराण में ब्रह्मा जी इस लिंग के दर्शन के अपने अनुभव का वर्णन इस प्रकार करते हैं :

> ज्वालामालासहस्राढ्यं कालानलशतोपमम्।
> क्षयवृद्धिविनिर्मुक्तमादिमध्यांतवर्जितम्॥
> अनौपम्यमनिर्देश्यमव्यक्तं विश्वसंभवम्।

> वह लिंग असंख्य ज्वाला-मालाओं से युक्त था जो कितने ही कालाग्नि अर्थात् प्रलयकाल की अग्नि सदृश था। क्षय और वृद्धि से मुक्त, उसका प्रकाश अतीव स्थिर था। वह लिंग अनुपम था, अत्युत्कृष्ट था और अवर्णनीय था। वह अखिल विश्व का स्रोत था।[४]

इस प्रकाश-स्तम्भ की अद्भुत दीप्ति को देखकर दोनों, भगवान ब्रह्मा और भगवान विष्णु विस्मयाभिभूत रह जाते हैं और अपना वाद-प्रतिवाद रोक देते हैं। वे दोनों ही इस अनन्त प्रभामय स्तम्भ को और अधिक जानना चाहते हैं। अतः, ब्रह्मा जी एक हंस का स्वरूप धारण कर उस स्तम्भ के आरम्भ का पता लगाने का प्रयास करते हैं और भगवान विष्णु एक वराह का स्वरूप धारण कर उस स्तम्भ का अन्त ढूँढ़ने के लिए प्रयास करते हैं। परन्तु, उन दोनों के प्रयास निष्फल सिद्ध होते हैं। वे दोनों उस प्रकाश के आरम्भ या उसके अन्त के निकट भी नहीं पहुँच पाते हैं। और जब उन्हें इस बात का एहसास हो ही रहा होता है, तब उन्हें उस स्तम्भ के मध्य में से प्रकट हो रहे एक तेजोमय पुरुष का रूप दिखाई देता है। वे भगवान शिव हैं।

इस कहानी में ब्रह्मदेव और भगवान विष्णु जिसका दर्शन कर रहे थे, वही था आद्य शिवलिंगम्—स्वयम्भू लिंगम्; ज्योतिर्लिंगम्, प्रकाश-स्तम्भ, अनन्त देदीप्यमान ज्योति जो सहज ही है, जिसका अस्तित्व सहजरूप में है, और जो इस समस्त सृष्टि का ज्योतिर्मय आधार-स्तम्भ है।

लिंगपुराण में ब्रह्मा जी देवताओं की सभा को सम्बोधित करते हुए इस प्रथम शिवलिंग के दर्शन का वर्णन करते हुए आगे कहते हैं :

> तदा समभवत्तत्र नादो वै शब्दलक्षणः।
> ओमोमिति सुरश्रेष्ठाः सुव्यक्तः प्लुतलक्षणः॥

> हे श्रेष्ठ देवो, तत्पश्चात् उस प्रकाश-स्तम्भ में से गड़गड़ाहट करती हुई प्रचण्ड गर्जना के साथ एक सुस्पष्ट आदिनाद ॐ उद्भूत हुआ। वह श्रेष्ठ, सुस्पष्ट, सुव्यक्त, दीर्घोच्चारित स्वर था।[५]

अतः, वह शिवलिंग आदिनाद 'ॐ' के स्पन्दन से भिन्न नहीं था और वस्तुतः वह अपने में समस्त वेद व समस्त ज्ञान को समाए हुए था। लिंगपुराण में आगे वर्णन किया गया है कि उस लिंग का तेज सूर्य, चन्द्र व अग्नि की प्रभा से कहीं अधिक उत्कृष्ट था। इस पुराण में भगवान शिव के इस दीप्तिमान स्वरूप का वर्णन 'शुद्ध स्फटिक' के रूप में किया गया है जो कि निर्गुण, निरंजन व निष्कलंक, अविचल व द्वन्द्वरहित अर्थात् परस्पर विरोधाभासी द्वन्द्वों से रहित है। वह लिंग विश्वात्मा था; वह ब्रह्माण्ड था—सम्पूर्ण विश्वब्रह्माण्ड का प्रतीक था, यह वह स्वरूप था जिसमें से सम्पूर्ण विश्व का उदय हुआ था।

सिद्धयोग पथ पर, हम श्रीगुरुमाई की सिखावनियों से और स्वयं अपने अनुभव द्वारा सीखते हैं कि यह ब्रह्माण्डीय प्रकाश-स्तम्भ हममें से हर एक के भीतर है। सूक्ष्म शरीर की दृश्यात्मक अभिव्यक्तियों मे इस लिंग को प्रायः मूलाधार चक्र में अवस्थित दर्शाया जाता है जहाँ सुप्त कुण्डलिनी शक्ति का वास है। यह चक्र इस प्रकाश-स्तम्भ का मूल-आधार है, और इस चक्र से लेकर शीश के ऊपरी भाग तक यानी सहस्रार तक इस स्तम्भ का विस्तार है।

एक साधक के रूप में, आत्मज्ञान प्राप्ति की हमारी यात्रा का आरम्भ तब होता है जब हमें शक्तिपात दीक्षा के रूप में श्रीगुरुकृपा प्राप्त होती है। जैसे-जैसे हम गुरुमार्ग का अर्थात् गुरु द्वारा बताए गए मार्ग का अनुसरण करते जाते हैं, हमारे अन्दर श्रीगुरु द्वारा जाग्रत की गई यह अन्तर-शक्ति इस प्रकाश-स्तम्भ में से तब तक ऊर्ध्वगमन करती जाती है जब तक कि वह शीश के ऊपरी भाग में स्थित सहस्रदल कमल अर्थात् सहस्रार में नहीं पहुँचती जिसे भारतीय शास्त्रों में सदाशिव-लोक के रूप में वर्णित किया गया है। यहीं पर महाकुण्डलिनी शक्ति महादेव के साथ एकरूप हो जाती है और शिष्य को अपने परमप्रिय, परम आराध्य श्रीगुरुदेव के साथ, अपनी अन्तरात्मा के साथ पूर्ण ऐक्य की अनुभूति होती है।

***

सिद्धयोग पथ पर हम जो बाह्य उपासना करते हैं, उसका उद्देश्य है, हमें अपनी अन्तर्निहित आत्मा की ओर अग्रसर करना। शिवलिंग महाकुण्डलिनी शक्ति की आन्तरिक यात्रा के प्रकाश-पथ का प्रतीक है, साथ ही यह उस गूढ़ पथ के लक्ष्य का भी प्रतीक है। जब हम शिवलिंग की पूजा करते हैं तब हम आत्मा के परम प्रकाश की पूजा कर रहे होते हैं, हम आदिगुरु के निराकार स्वरूप की पूजा कर रहे होते हैं जो हमारी हृदय-गुहा में वास करते हैं।

शिवलिंग के भिन्न-भिन्न रूपाकार हो सकते हैं। भारत में पाए जाने वाले शिवलिंगों में से अधिकांश लिंग 'स्वयम्भू' हैं अर्थात् ये प्राकृतिक रूप में प्रकट हुए हैं और इनके आकारों में भिन्नता है। प्रायः ये विशाल

अण्डाकृति होते हैं जो प्रकाश-स्तम्भ को दर्शाती है, या फिर गोलाकार पिण्डी के रूप में होते हैं जो ब्रह्माण्ड को, सृष्टि के स्रोत को दर्शाती है।

मन्दिरों और घरों में प्रतिष्ठापित किए जाने वाले मानव-रचित अर्थात् 'कृत्रिम' शिवलिंग सामान्यतः पत्थर के बने होते हैं। इनका ऊपरी भाग लम्बवत् खड़ी पिण्डी होती है जो कि भूमि या आधाररूप सतह पर बनी वेदी में स्थित होती है। इस पिण्डी को लिंग कहा जाता है जो प्रकाश-स्तम्भ की द्योतक है। इसका सबसे ऊपरी भाग, जो दिखाई देता है, स्वयं भगवान शिव को दर्शाता है। मध्यभाग जो वेदी के अन्दर स्थित होता है और इसलिए दिखाई नहीं देता, वह भगवान विष्णु से सम्बन्धित है। सबसे निचला भाग जो भूमि या आधाररूप सतह के अन्दर होता है और इसलिए दिखाई नहीं देता, वह ब्रह्मा जी को दर्शाता है। वेदी भगवती पराशक्ति की द्योतक है।

संस्कृत में 'लिंगम्' शब्द का एक अर्थ है, 'चिह्न' या 'प्रतीक'। शिवलिंग सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का द्योतक है—अर्थात्, सृष्टि, स्थिति और लय की शक्तियों का, और सबसे महत्त्वपूर्ण रूप में यह द्योतक है पराशक्ति का जो इस प्राकट्य को उजागर कर इसे साकार रूप देती है। शिव और उनकी शक्ति अवियोज्य हैं, उन्हें अलग नहीं किया जा सकता।

शिवलिंग की पूजा प्रायः अभिषेक के रूप में की जाती है। अभिषेक के बाद शिवलिंग को सुगन्धित इत्र या चन्दन का लेप भी लगाया जा सकता है और फिर लिंग के ऊपर कमल पुष्प व बिल्व पत्र अर्पित किए जा सकते हैं जो कि भगवान शिव को प्रिय हैं। परम्परागत रूप में, इसके बाद धूप-दीप द्वारा आरती कर, 'ॐ नमः शिवाय' मन्त्र का जप या संकीर्तन किया जाता है।

***

पौराणिक कथाओं के अनुसार, सर्वप्रथम दिव्यलोकों में भगवान ब्रह्मा और भगवान विष्णु के समक्ष प्रकट होने के पश्चात्, आदिगुरु शिव आगामी युगों में अपने भक्तों की रक्षा व उनका मार्गदर्शन करने हेतु, ज्योतिर्लिंग [ज्योतिर्मय प्रकाश-स्तम्भ] के रूप में विभिन्न स्थानों में प्रकट हुए। ऐसी कथाएँ हैं कि जब भी भगवान शिव प्रकट हुए, उनके भक्तों ने उनसे प्रार्थना की कि वे उस स्थान में सदा के लिए निवास करें। इसलिए मानवजाति के कल्याण हेतु उन्होंने एक स्थावरलिंग का रूप धारण किया।

भगवान शिव के स्वरूप का प्रतिपादन करने वाला एक भारतीय शास्त्र, शिवमहापुराण कहता है :

लोकानामुपकारार्थं स्वलिंगं चाप्यकल्पयत्।
तल्लिंगं पूजयित्वा तु सिद्धिं समधिगच्छति॥

उन परम शिव ने लोकलोकान्तरों के कल्याणार्थ
और उनका उद्धार करने हेतु लिंगस्वरूप धारण किया है।
उस लिंगस्वरूप की पूजा कर भक्त पूर्णत्व को प्राप्त करता है।[६]

भारत में बारह मुख्य ज्योतिर्लिंग हैं। आज भी भक्तगण ज्योतिर्लिंग-यात्रा करते हैं; ये स्थान भगवान शिव के पावनतम तीर्थ माने जाते हैं तथा इनके चारों ओर निर्मित मन्दिर शक्तिपीठ हैं।

ज्योतिर्लिंग के सभी पुण्यस्थल जलाशयों के निकट स्थित हैं—नदीतट पर या समुद्र के समीप या फिर अन्य जलाशयों के निकट जैसे किसी सरोवर या कुण्ड के निकट। परम आत्मा के प्राकट्य के लिए स्थान का यह चयन इतना ध्यान देने योग्य क्यों है? इसके, व्यावहारिक व दार्शनिक, दोनों कारण हैं। व्यावहारिक दृष्टि से देखें, तो चूँकि जल जीवन का स्रोत है अतः मन्दिर के आस-पास के क्षेत्र में बस जाना लोगों के लिए आसान होगा, क्योंकि वहाँ जल है; वे पीने, स्नान करने व खेती करने के लिए उस जल का उपयोग कर सकते हैं। दार्शनिक दृष्टि से, ऐसा माना जाता है कि जल के कारण पुण्यस्थल की आध्यात्मिक शक्ति बनी रहती है और उसमें वृद्धि भी होती है।

बारह ज्योतिर्लिंग उसी क्रम में बताए जाते हैं जिस क्रम में वे शिवमहापुराण में वर्णित हैं। इनमें से हर एक का विशेष माहात्म्य है और प्रत्येक ज्योतिर्लिंग भगवान शिव के विशिष्ट गुणों का साकार रूप है।

सिद्धयोगियों के लिए ज्योतिर्लिंग का विशेष महत्त्व है क्योंकि बाबा मुक्तानन्द और श्रीगुरुमाई ने अपनी भारत-यात्राओं के दौरान इनमें से लगभग सभी ज्योतिर्लिंग की यात्रा कर उनकी पूजा की है।

सोमनाथ

सर्वप्रथम ज्योतिर्लिंग है, 'सोमनाथ', जिसका अर्थ है 'सोम के स्वामी'। ['सोम' चन्द्रमा का नाम है, और 'नाथ' का अर्थ है, 'स्वामी']। अरबी समुद्रतट पर, गुजरात के वेरावल क्षेत्र में स्थित सोमनाथ के बारे में कहा जाता है कि यह त्रिवेणी संगम अर्थात् हिरण, कपिला और पौराणिक नदी सरस्वती के महासंगम के निकट स्थित है।

शिवमहापुराण के अनुसार, यहीं पर चन्द्रदेव ने भगवान शिव की आराधना में घोर तपस्या की थी। इसमें बताई गई कथा के अनुसार ब्रह्मा जी के पुत्र, प्रजापति चन्द्रदेव से अत्यन्त क्रुद्ध हुए थे। अतः प्रजापति ने चन्द्रदेव को शाप दिया कि उनका सारा तेज नष्ट हो जाएगा और उनका अस्तित्व ही नहीं रह जाएगा। चन्द्रदेव की तपस्या से प्रसन्न होकर, भगवान शिव ज्योतिर्मयस्वरूप में चन्द्रदेव के समक्ष प्रकट

हुए और उन्हें वरदान दिया कि उनका तेज नष्ट न होकर, उनकी कला एक पक्ष में प्रतिदिन घटेगी और दूसरे पक्ष में फिर वह बढ़ेती रहेगी। भगवान शिव ने चन्द्रदेव के अर्धचन्द्ररूप को स्वयं अपनी जटाओं में धारण कर उन्हें धन्य किया। तब से भगवान शिव 'सोमनाथ' के नाम से प्रसिद्ध हुए।

संस्कृत में 'सोम' का अर्थ 'अमृत' भी होता है। श्रीगुरुगीता के अनुसार, अन्तर-गुरु का वास सहस्रार में होता है जो चन्द्रप्रकाश[७] से आवृत है।

मल्लिकार्जुन

'मल्लिकार्जुन' दूसरा ज्योतिर्लिंग है जो आन्ध्रप्रदेश राज्य के श्रीशैलम् में स्थित है। यह कृष्णा नदी के निकट एक पहाड़ी पर है।

'मल्लिका' देवी पार्वती का एक नाम है और 'अर्जुन' भगवान शिव का एक नाम है। ऐसी कथा है कि मल्लिकार्जुन, भगवान शिव और देवी पार्वती, दोनों का धाम है; यह ज्योतिर्लिंग के रूप में भगवान शिव का स्थान है और यह शक्तिपीठ यानी परादेवी का स्थान भी है।

मल्लिकार्जुन आरोग्य व सुख-समृद्धि के प्रदाता हैं, विश्वकल्याण उनका प्रयोजन है। शिवमहापुराण में कहा गया है कि मल्लिकार्जुन के रूप में भगवान शिव की पूजा करने से मनुष्य समस्त दुःखों से मुक्त होकर परम सुख को प्राप्त करता है। 'मल्लिका' एक सफ़ेद रंग के सुगन्धित पुष्प का नाम भी है जो भगवान शिव को अति प्रिय है।

अनेक सन्तों व ऋषि-मुनियों ने भगवान शिव के मल्लिकार्जुन स्वरूप का पूजन-वन्दन किया है। उदाहरण के लिए, महान सन्त-कवयित्री श्रीअक्कमहादेवी ने अपने 'वचनों' अर्थात् अपने काव्य में भगवान शिव के इसी स्वरूप का गुणगान किया है। वे भगवान को 'चेन्नमल्लिकार्जुन' [प्रियतम भगवान जो मल्लिका-पुष्प के समान सुन्दर हैं] कहकर सम्बोधित करती थीं। यहीं, श्रीशैलम् में ही वन्दनीय आदि श्रीशंकराचार्य ने महादेव का गुणगान करते हुए 'शिवानन्दलहरी' नामक सौ पदों की स्तुति की रचना की।

बाबा मुक्तानन्द ने अनेक अवसरों पर मल्लिकार्जुन की यात्रा कर पूजा अर्पित की है। सन् १९७३ की अपनी यात्रा के दौरान बाबा जी ने उस ज्योतिर्लिंग का अभिषेक किया और फिर अपने गले में पहनी हुई रुद्राक्षमाला निकालकर शिवलिंग पर रखी। उसके बाद वे गहरे ध्यान में उतर गए। तत्पश्चात्, जब बाबा जी लिंग पर से अपनी माला निकालने लगे तो वह निकल ही नहीं रही थी! वह टस से मस तक

नहीं हुई, मानो वह ज्योतिर्लिंग से बिलकुल चिपक गई हो। बाबा जी मुस्कराए और उन्होंने कहा, “ऐसा लगता है कि उन्हें मेरी माला पसन्द आई है। उन्हें मेरी माला चाहिए।”

फिर बाबा जी ने उस शिवलिंग से पूछा, “क्या आप मेरी माला लौटाएँगे नहीं?” उसके बाद जब वे फिर से माला निकालने लगे तो वह ढीली हो चुकी थी और लिंग पर से तुरन्त निकल आई। बाबा जी ने अपने गले में वह माला पहन ली और मन्दिर के पुजारी से कहा : “भगवान शिव को मेरी माला इसलिए चाहिए थी क्योंकि यह माला मेरे गुरुदेव भगवान नित्यानन्द ने मुझे दी थी।”

महाकालेश्वर

मध्यप्रदेश के उज्जैन शहर में शिप्रा नदी के तट पर ‘महाकालेश्वर’ के रूप में भगवान शिव का वास है। ‘महाकाल’ यानी ‘परमोच्च काल या समय’ और ‘ईश्वर’ यानी ‘शासक’ या ‘अधिष्ठाता’।

महाकालेश्वर के रूप में भगवान शिव को समस्त काल के अधिपति के रूप में पूजा जाता है और इसीलिए उन्हें मृत्यु के देवता, यमराज के रूप में भी पूजा जाता है। जब एक साधक महाकालेश्वर की आराधना करता है तो वह उन आदिगुरु का सम्मान कर रहा होता है जो काल से बद्ध नहीं हैं और जो ‘उसका’ अनुभव प्रदान करते हैं जो कालातीत और शाश्वत है। शिवमहापुराण के अनुसार, महाकालेश्वर उस सब को भी अपने आशीर्वाद व संरक्षण प्रदान करते हैं जो समय से बँधा हो, जैसे प्रकृति और भौतिक शरीर।

ओङ्कारेश्वर

चौथा ज्योतिर्लिंग है ‘ओङ्कारेश्वर’ जो मध्यप्रदेश के खण्डवा शहर में पावन नर्मदा नदी के तट पर स्थित है। ‘ओङ्कारेश्वर’ का शाब्दिक अर्थ है, ‘आदिनाद ॐ के स्वामी’।

‘ओङ्कारेश्वर’ ॐ का सार और आत्मा हैं। इस रूप में आदिगुरु का सम्मान समस्त ध्वनियों, वर्णों और मन्त्रों के अधिपति के रूप में किया जाता है। वे मातृका शक्ति के अर्थात् उस शक्ति के अधिष्ठाता हैं जो समस्त शब्दों को अर्थमय बनाती है। मन्त्र-जप के अभ्यास द्वारा, पावन स्तोत्रों के पाठ द्वारा, नामसंकीर्तन द्वारा और श्रीगुरु की सिखावनियों का अध्ययन कर एक साधक समस्त ध्वनियों और भाषा में ‘ओङ्कारेश्वर’ की उपस्थिति को और भी स्पष्ट रूप से जान सकता है।

केदारनाथ

हिमालय की भव्य, हिमाच्छादित पर्वत-श्रेणियों और सुरम्य हरेभरे मैदानों के बीच विराजमान है, पाँचवा ज्योतिर्लिंग : 'केदारनाथ'। पावन अलकनन्दा नदी की उपनदी मन्दाकिनी का उद्गम-स्थान केदारनाथ के निकट है।

ऐसी मान्यता है कि भारतीय महाकाव्य महाभारत में वर्णित महायुद्ध समाप्त होने के बाद पाण्डवों ने युगों पूर्व केदारनाथ मन्दिर का निर्माण किया था। हर वर्ष हज़ारों भक्तगण भारत में जो चार-धाम यात्रा करते हैं, केदारनाथ उनमें से एक है। शिवमहापुराण के अनुसार, केदारेश्वर की आराधना से मनुष्य जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्त हो जाता है।

भीमाशंकर

'भीमाशंकर' छठा ज्योतिर्लिंग है जो महाराष्ट्र के हरेभरे वनों के मध्य, पुणे शहर के निकट स्थित है। भीमावती नदी का उद्गम यहीं से होता है।

भगवान शिव को 'भीमाशंकर' इसलिए कहा जाता है क्योंकि उन्होंने दुष्ट राक्षस भीम को परास्त कर दिया था; उस दुष्ट, दुःखदायी राक्षस के कारण सभी ईश्वरभक्तों के हृदय भयग्रस्त हो चुके थे। भीम क्रोध, ईर्ष्या और गर्व का द्योतक था। भीमाशंकर के रूप में आदिगुरु एक शिष्य के सभी नकारात्मक गुणों को नष्ट कर देते हैं।

काशी विश्वनाथ

पावनतम गंगा नदी के तट पर बसी है, पुण्यनगरी वाराणसी, सातवें ज्योतिर्लिंग का स्थान—'काशी विश्वनाथ' के रूप में भगवान शिव। यह सम्पूर्ण भारत के सर्वाधिक पूज्य तीर्थों में से एक है।

'विश्वनाथ' या 'विश्वेश्वर' भगवान शिव का नाम है जिसका अर्थ है 'वे जो विश्व के नाथ [ईश्वर या अधिपति] हैं'। वाराणसी जो काशी के नाम से भी प्रसिद्ध है, उसे विश्व की सबसे पुरानी नगरी भी माना जाता है। ज्योतिर्लिंग का स्थान होने के साथ-साथ काशी विश्वनाथ शक्तिपीठ भी है। देवी पार्वती यहाँ सम्पूर्ण विश्व का भरण-पोषण करने वाली जगज्जननी, माँ अन्नपूर्णा के रूप में निवास करती हैं।

त्र्यम्बकेश्वर

आठवाँ ज्योतिर्लिंग 'त्र्यम्बकेश्वर' महाराष्ट्र के नासिक शहर में ब्रह्मगिरी पर्वत पर स्थित है। यह पुण्यस्थल गोदावरी नदी का उद्गम-स्थान भी है।

'त्र्यम्बकेश्वर' का अर्थ है, 'वे ईश्वर जिनके तीन नेत्र हैं'। माथे पर भ्रूमध्य में स्थित भगवान शिव का तीसरा नेत्र अन्तर-चक्षु को दर्शाता है—बाह्य जगत को देखते हुए भी, उसमें व्यवहार करते हुए भी उनकी दृष्टि सदैव अन्तर में देखती है, वहीं केन्द्रित रहती है। विवेक का यह अन्तर-चक्षु साधक की उसके अपने अज्ञान से, अचेतनता या अनभिज्ञता से और उसके अन्तर-शत्रुओं से रक्षा करता है।

यहाँ का शिवलिंग विशेष है क्योंकि यहाँ पर तीन लिंग विराजित हैं जो क्रमशः भगवान शिव, भगवान ब्रह्मा जी और भगवान विष्णु को दर्शाते हैं।

बाबा मुक्तानन्द को त्र्यम्बकेश्वर की यात्रा करना बहुत प्रिय था। यहाँ तक कि अपने साधनाकाल में, एक बार उन्होंने सम्पूर्ण चातुर्मास्य के दौरान इस मन्दिर के निकट निवास भी किया था। तत्पश्चात्, १९६० के दशक में बाबा जी कुछ भक्तों के साथ हर वर्ष त्र्यम्बकेश्वर की यात्रा करने लगे। वहाँ वे भगवान शिव की पूजा-अर्चना करते, ध्यान करते और सत्संग करते।

वैद्यनाथ

'वैद्यनाथ' अर्थात् 'चिकित्सा, उपचार व स्वास्थ्य के परमेश्वर', नौवाँ ज्योतिर्लिंग है जो भारत के झारखण्ड में देवघर नामक स्थान में स्थित है। यह मन्दिर पवित्र शिवगंगा तालाब के निकट है।

अपने भक्तों के चित्त, शरीर और हृदय को पीड़ित करने वाले रोगों से मुक्ति देने वाले भगवान शिव के रूप में इस ज्योतिर्लिंग की पूजा की जाती है। इस रूप में भगवान शिव अपने भक्तों को पूर्ण स्वस्थ होने के मार्ग पर, अन्तरात्मा में अवस्थित होने के मार्ग पर अग्रसर करते हैं।

नागेश्वर

गुजरात में द्वारकापुरी के पास समुद्र के निकट स्थित है, दसवाँ ज्योतिर्लिंग, 'नागेश्वर' जिसका अर्थ है 'नागों के देवता'। इसके निकट अनेक पवित्र सरोवर हैं, जैसे गोपी तालाब और भीमगज तालाब।

नागेश्वर लिंग त्रिमुखी रुद्राक्ष के आकार का है। भगवान श्रीकृष्ण के निवास-स्थान द्वारका के समीप होने के कारण, ऐसी मान्यता है कि भगवान श्रीकृष्ण प्रायः इस ज्योतिर्लिंग की पूजा करते थे। ऐसा कहा

जाता है कि भगवान नागेश्वर व्यक्ति को समस्त आन्तरिक विष से मुक्त करते हैं, जैसे द्वेष, क्रोध और ईर्ष्या।

रामेश्वर

ग्यारहवाँ ज्योतिर्लिंग, 'रामेश्वर' भारतीय उपमहाद्वीप के छोर पर, भारत के प्रायद्वीपीय क्षेत्र और श्रीलंका के बीच एक छोटे-से द्वीप पर स्थित है। रामेश्वर मन्दिर में और इसके परिसर में अनेक पवित्र तीर्थ हैं, और ऐसी परम्परा है कि मन्दिर में भगवान शिव के दर्शन करने से पहले श्रद्धालु इन तीर्थों में स्नान करते हैं।

रामायण के अनुसार, प्रभु राम ने दैत्यराज रावण के साथ युद्ध करने हेतु लंका जाने के लिए समुद्र पार करने से पहले यहीं पर, भारत के इसी दक्षिणी छोर पर, भगवान शिव की आराधना की थी। तब भगवान शिव ने प्रभु राम के समक्ष प्रकट होकर उन्हें विजयश्री का आशीर्वाद दिया था। प्रभु राम ने भगवान शिव से विनयपूर्वक प्रार्थना की थी कि समस्त मानवजाति पर कृपा करने हेतु वे आने वाले युगों में इसी स्थान पर वास करते रहें।

रामेश्वर महादेव के रूप में आदिगुरु हमें साहस, बल और भले कर्म करने व धर्म के मार्ग पर चलते रहने के अपने प्रयासों में विजयी होने के लिए आशीर्वाद प्रदान करते हैं।

घृष्णेश्वर

बारहवाँ और अन्तिम ज्योतिर्लिंग 'घृष्णेश्वर महादेव' महाराष्ट्र के औरंगाबाद शहर के निकट स्थित है। घृष्णेश्वर के रूप में भगवान शिव करुणेश्वर हैं, क्षमा और सुख के दाता हैं, और अपने भक्तों का उद्धार करने वाले हैं। इस स्वरूप में आदिगुरु अकल्पनीय कृपा व आशीर्वादों के प्रदाता हैं।

बाबा जी और गुरुमाई जी, दोनों ने घृष्णेश्वर मन्दिर की यात्रा की है। १९८० के दशक के अन्त में, अपनी भारत-यात्रा का शुभारम्भ करते समय गुरुमाई जी ने यहाँ की यात्रा की थी। उस यात्रा के दौरान गुरुमाई जी ने व उनके साथ गए सिद्धयोगियों ने इस मन्दिर में श्रीगुरुगीता का पाठ किया था, ज्योतिर्लिंग का अभिषेक किया था और सिद्धयोग परम्परा के दीक्षा-मन्त्र 'ॐ नमः शिवाय' का संकीर्तन किया था।

***

शिवलिंग के स्वरूप और इसकी शक्ति पर चिन्तन-मनन करना मुझे अत्यन्त प्रिय है क्योंकि यह मुझे अन्तर्निहित दिव्य प्रकाश के प्रति जागरूकता बनाता है, उसी दिव्य प्रकाश के प्रति जिसे श्रीगुरुमाई ने

मेरे अन्दर जाग्रत किया है और जिसे मैं उनकी उपस्थिति और उनके दर्शन के साथ जोड़ती हूँ। शिवलिंग के बारे में चिन्तन करना, उसकी पूजा करना हमेशा ही मुझे अपनी श्रीगुरु के प्रति गहरी कृतज्ञता के भाव के साथ जोड़ता है।

लगभग बीस वर्ष पहले, श्रीगुरुमाई गणेशपुरी गाँव में भगवान नित्यानन्द के समाधि मन्दिर के निकटस्थ भीमेश्वर महादेव मन्दिर गई थीं। यह मेरा सौभाग्य था कि गुरुमाई जी के साथ जो सिद्धयोगी गए थे, मैं भी उनमें से एक थी। गुरुमाई जी ने वहाँ शिवलिंग की पूजा की; तत्पश्चात् हम मन्दिर के गर्भगृह में ध्यान करने गए। मुझे याद है, जब मैं वहाँ बैठी थी, मेरी आँखें हल्की-सी खुली थीं, और मैं श्रीगुरुमाई को देख रही थी व शिवलिंग को देख रही थी। उस क्षण में मुझे एक अनुपम अनुभूति हुई कि दोनों एक ही हैं; कि शिवलिंग से और मेरी श्रीगुरु की सत्ता में से जो दिव्य तेजोमय शक्ति प्रसरित हो रही है, वह एक ही है। मैंने मन ही मन दोनों को नमन किया—आदिगुरु के उस लिंगस्वरूप को और मेरी श्रीसद्गुरु को। मुझे ऐसा महसूस हुआ कि मैं भगवान को भगवान की पूजा करते हुए देख रही हूँ, आत्मा को आत्मा का ध्यान करते हुए देख रही हूँ। और अपनी श्रीगुरु से अन्तर-जागृति प्राप्त मैं भी, वहीं थी, उस दिव्य शक्ति से जुड़ी थी—गुरुमन्त्र के माध्यम से, जिसका मैं जप करती हूँ, गुरुसेवा अर्पित करने के माध्यम से, श्रीगुरुमाई की सिखावनियों के अपने अध्ययन व अभ्यास के माध्यम से और अपनी परम आराध्य, परम प्रिय श्रीगुरु के प्रति अपनी श्रद्धा-भक्ति के माध्यम से।

© २०२२ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।

---

[१] श्रीगुरुगीता श्लोक ९६।
[२] श्रीगुरुगीता श्लोक ९७।
[३] श्रीगुरुगीता श्लोक २३।
[४] लिंगपुराण १७. ३४-३५।
[५] लिंगपुराण १७. ४९।
[६] शिवमहापुराण ८.१.१७।
[७] श्रीगुरुगीता श्लोक ९१।